चप्तं अध्याय

उपसंहार

=====
उपर्यक्तार

शैलीविकास भाषाशिक्षा को प्रेमा नवीन शाखा है और हिंदी में
ला दिशा में मात्र पिछे दस-पन्न्द वर्षों से ही काम शुरू हुआ है। शैलीविकास का
पत्तिशाक विवेचन और भाषावादी विवेचन अभ्युधित वैज्ञानिक वैज्ञानिक मान्यताओं और
भाषावैज्ञानिक प्रमाणों के रंग में रंगा है। वह तारिक्त सिद्धान्त का वैज्ञानिक
विवेचन भी है और आलोचक की ज्ञानिक गुणिता भी है।

प्रसाद भाष्य का शैलीवैज्ञानिक अध्ययन व्यवस्थित देख से हो लगे,
इसके लिए आवश्यक या फिर प्रसाद भाष्य का विवेचनात्मक परिवर्तन किया जाए।
प्रथम अध्याय इस दिशा में रमोचित भूमिका प्रस्तुत करता है। कवि "प्रसाद"
"अभ्युधित हिंदी कविता के पिता" कहे जाते हैं। प्रसाद राज्यविद्या, भाष्य का संघर्ष,
पुरुष के दिशायों और मानवतावादी विवारों का कार्यादृष्ट रखने वाले पुरुषात्मका
तुल्य थे। वे कवि, पुनरान्त, पित्रक-सभी कुछ थे, और उनका समुह साधित वैविध्यात्मक
है। विवाह, भाषा-शैली, विवाह, कार्यात्मक आदि सभी दुरुपियाँ ते उनमें
केवलित यिंहता है। उन्होंने ताता गृहार के पुरोहित किये
हैं और इन्हें के अनुसार उनके भाषा-संस्कार की दृष्टि है।

प्रसाद की की प्रारंभिक रचनाओं - "प्रियाधार", "कानन-बुध".
"बच्चा" में कवि ने तारिक्त से पौराणिक विवाह वैज्ञानिक कविता की सुना है विस्मयपूर्ण भावना
और प्रकृति का गुदर विवेचन भी देखी जो वितता है। "बच्चा" में प्रकृति की
मनुष्य मनोदर मृति का समेत स्था दिखाई देता है। "आमू" एक विभिन्न हृदय के लक्ष्य स्वामित्व उपयुक्त नहीं है। "लहर" का कौशल चिन्तन-शील हो गया है। और "भास्कर" में विभाजन संयुक्त तत्त्व जो प्राप्ति-विकास के तरह पूर्वनुमा किया गया है। जिसे हम अनेक दृष्टियों से छायावादी कार्य की सहायता महत्वपूर्ण कृति मान सकते हैं। उनके बारों में छायावाद, प्रायोगिक, प्रवृत्तिवाद एवं अध्यात्मवाद सभी को बनाने को विभाजित है। उनकी सभी कार्य-कृतियों में भाषा के विभिन्न रूप देखने को मिलते हैं।

पितृभाषा अध्याय में कैरोपिलिन सम्बन्धी आवश्यक तत्त्वों पर गहराई से विचार करने के बाद विचलन, धर्म, समानान्तरता, अप्रसुत विचार आदि प्रमुख आधारों को लझा गया है। उनकी परम्पराओं व प्रमुख कृतियों पर विचार किया गया है।

भूमय अध्याय में कैरोपिलिन दृष्टि से विचलन वर्तमान विचार हुआ है। हर केही के अपने विषय होते हैं, धर्म, स्थ, रक्त, ब्रह्मण, वार्षिक-रक्त तथा अपवासिन आदि के विभिन्न तरह पर अपनी भावना होती है। सामान्य भाषा इन निम्नों और व्यक्ति में सबसे होती है, किन्तु कार्य-भाषा हमें इन निम्नों में सबसे नहीं होती। उसे विशिष्ट बनना पड़ता है।

विशिष्ट बनने के लिए कार्य-भाषा सामान्य निम्न भाषाओं को तोड़ते है तथा उनके प्रेषित्त ब्रा स्वयं होता है। सामान्य भाषा का जो प्रत्याशित निम्न कुप ढूंढता है उसे हम विचलन या विचार करते हैं। सामान्य मानक प्रयोग के स्थान पर
जब कवि नये शब्दों का प्रयोग करता है या जब शब्दों की स्थान-ट्यूक्ति होती है वह विचलन है। इस प्रकार सामान्य भाषा के नियम, बन्धन, कला अथवा पवन को कृतिकर नये पवन का अनुकरण करना या नये पवन पर कला को चिन्हन है। 

उदाहरण में इसके Deviation बताये हैं। संस्कृत की प्रतिष्ठा उक्त "निरंजणा: कयम" इसी निरंजणा होते हैं। इस बात के चाहते हैं कि विचलन का-कर्म का स्थानांतरिक लघु मान लिया गया है।

प्रस्तुत कार्य में स्वाक्षरिक एवं भाषाक्रिय विचलन उपलब्ध होता है।

तोदारण वर्तित है कि विचलन के कारण प्रस्तुत को भाषा कैसे नये तेवर धारण करती है, नई अस्तित्व पाती है और दर्शन को प्रमाणकाली और मानसिक बनाती है। प्रस्तुत को भाषा में स्वाक्षरिक विचलन के सभी व्य-संख्या, सर्पनाम, विशेषण, फ़िया, फ़िया विशेषण, कारक, उपसर्ग-प्रत्यय, कला, लिंग को नेतृ वापस विचलन तथा भाषाक्रिय विचलन, अधिविचलन आदि भिन जाते हैं। इन पर तोदारण दर्शन की गई है। इस अध्ययन के प्रमाण यह स्पष्ट है कि प्रस्तुत ने सदैव भाषा को स्थानांतर के अधिक उत्सकों अर्थवर्त तो उनकी विचलन चाहते हैं।

देव सदैव विशेषण वर्तित को सबसे देव के कारण रहते हैं और इस दृष्टिलित से शब्दों की तोड़-मरोड़ उनके स्थान वर्तित नहीं हैं। नवालनकार, चन्द्र को माँग, विशेष-नक्षत्र अर्थवर्त तो विचलन वायु की कारणता से विचलन का बहुत अधिक प्रयोग प्रस्तुत में प्राप्त है। इस प्रकार प्रतिष्ठा से विचलित प्रयोगों की दृष्टि के कारण प्रस्तुत के कार्य में श्री एवं तोन्नतियों को हुई हुई है। इर प्रकार के विचलनों के गहरे अध्ययन से बात होता है कि भाषा विचलन के खातिर विचलन उनका लघु करी नहीं था।
उनके लगभग सभी प्रयोग सार्थक हैं।

वर्तमान अध्याय में यथा के त्याख्यात साधनी गई है। वैदिक-विकास के अनुसार काँचीलिक के निम्नांकन में यथा का लघुत्तम महत्त्व है। यथा का उद्देश्य है "डुनना"। यथा अर्थात वैदिक अर्थ सहायक हैं। वैदिक या लेकर अर्थ सहायक है। यथा यथा, वर्तमान तथा अवतरण व्याप्ति का श्रेय स्वीकार करता है, उसे यथा कहते हैं। प्रसाद के कार्य में सभी पूर्व व्यक्तित्व तथा ध्यान-संबंध, स्थित, वाक्य, कारक तथा अर्थ-यथा के विपुल उदाहरण उपलब्ध हैं। प्रसाद इस क्रम में अभाव ये। उनका यथा प्रक्षिप्त उत्तरांत है सार्थक और प्रभावशाली है। कभी कभी संबंध के तत्त्व तथा संबंध को अद्वितीय तय करते हैं तो कभी तद्भव को वह कठिन देख स्वयं का बोलबाला है। संबंधों के समय अन्तर को समझने वाले संबंध सिद्धान्त प्रसाद ने इस अवस्था को अनुसार उपयुक्त पदों का यथा किया है। जिसके उद्धरण के दृष्टिकोण देखकर मुख्य हो जाना पड़ता है।

प्रसाद ने कुछ यथा नाम-निवृत्ति द्वारा खोजकर, तो कुछ उन्नतियों की गणना के कारण भी। कुछ उत्तरांत सामान्यतः काँचीलिक और पुनरुत्तम प्रक्षिप्तियों से अभिव्यक्ति है। तो कुछ उद्देश्य के आग्रह से। परन्तु उत्तरांतिता को ध्यान में रखकर ही अंतिम यथा किये गये हैं। यह अभिव्यक्ति स्थापित हो जाता है। ओपुरविशुष्ट यथा उपयुक्त तथा, तयारित्व आदि उनके यथा कर्म के आधार रहे हैं। उत्तो यथा अर्थ-पत्र, मानविक्षत और प्रभावशाली संज्ञान भी संबंध यथा के आधार रहे हैं। इसी प्रकार व्याख्यातित्व स्वयं का यथा संबंध, विषयमित, समस्त एवं असमस्त तथा मानक एवं उमानक स्वयं का ध्यान में रखकर हुआ है। प्रसाद विभाग में इन तब के
हन्दर उदाहरण मिल जाते हैं। प्रसाद यथावत मानव चप्पल करने में खुल है।
सौदाहरण यह प्रतिपादित किया है कि प्रसन वाक्य, विशेष वाक्य, विश्वास वाक्य, संयुक्त वाक्य, तत्त्व वाक्य - सभी का यथिष्ठत हन्दर प्रयोग उनकी एक विशेषता है।

चतुर्थ अध्याय में समानान्तरता पर विचार किया गया है। किसी रचना में समान या विरोधी भाषिक इकाइयाँ के समानान्तर प्रयोग को समानान्तरता कहते हैं। इसमें समान भाषिक इकाई को एक या अधिक बार अनुवादित होती है अथवा अग्र में समान या विरोधी संज्ञा कहता है और यह संज्ञा समानान्तरता के कारण हो संबंध होता है।

इसमें कर्म, पद, वाक्य, अर्थ आदि में से किसी एक अथवा स्वाभाविक भाष्य तर्क को अनुवादित होता है। पाँचवें अध्याय में समानान्तरता के विवेचन वेदों पर विचार किया गया है। समानान्तरता के अनेक प्रकार हैं - समानता तथा असमानता के आधार पर समानान्तरता, समातामूलक समानान्तरता, विरोधाभासमूलक समानान्तरता, धार्मिक समानान्तरता, शब्दिक समानान्तरता, स्थायी समानान्तरता, अर्थी समानान्तरता, आदि। पुस्तक इस कौशल का उपयोग निःशुल्क से करते हैं।
संयोग विरोधमूलक और आर्थिक समानान्तरता के उपयोग में तो वे मान्य आदर्श हैं।

पांचवें अध्याय में अपस्तुत विधान पर विचार किया गया है। जिसका कर्म किया जाता है वह कर्म विधान अपस्तुत न होकर अपस्तुत हो तो उसे अपस्तुत कहते हैं। अपस्तुत का आधार साम्य या सामान्यता रहता है। यह सामान्य रंग-शोभा है।
आकार । किया आदि अत्यधिकतम तंत्रो । को लक्ष्य में रखकर दिखाया जाता है । प्रस्तुत और अप्रस्तुत के बीच का सामय प्रत्यक्ष भी ही सकता है और अप्रत्यक्ष भी । प्रस्तुत और अप्रस्तुत में सामय जितना अधिक होगा भावोद्वृत्ति या तौंदर्य बोधन की शक्ति उतनी ही अधिक होगी । प्रस्तुत और अप्रस्तुत के बीच में कई प्रकार का सामय हो सकता है । स्प-सामय , आकार-सामय , प्रभाव-सामय , धर्म-सामय , किया-सामय आदि ।

अप्रस्तुत विधान में सामूलक आकार , प्रतीकात्मकता , विभवात्मकता आदि सभी अप्रस्तुतों का समावेश होता है । इसमें ऐसे शब्दों का प्रयोग भी होता है किया कोष-सम्मत न होकर प्रतीकात्मक होते हैं । भारतीय काश्यपान में सामूल- मूलक शब्दारों का रचनात्मक आधार प्रस्तुत विधान होता है । किल्ले आधुनिक शैली विधान उपयोग और उपयोग के पारस्परिक सहायता के अन्तरिक्ष विश्वस्त्र शब्दों के सामय के आधार पर भी अप्रस्तुत विधान स्वीकार करता है ।

प्रस्ताद काम्य में प्रयोग के आधार पर अप्रस्तुतों के अनेक प्रकार हैं । जैसे - विद्वान स्व- , किया स्व- , किया विशेषण स्व- , मानवविशेषण स्व- में । प्रतीक स्व में आदि । विभवात्मक शैली के आधार पर द्रव- निम्न । धार्मिक विभम , वचन विभम , राजनीतिक विभम , स्पर्श विभम , भावात्मक विभम आदि । इनके तिथि मूर्त-भूर्त के आधार पर भी अप्रस्तुत के अनेक शब्द हैं । यथा - मूर्त के लिए मूर्त , मूर्त के लिए मूर्त , अपूर्त के लिए अपूर्त , अपूर्त के लिए अपूर्त आदि । इन सबकी सोदा शर्म पर रोकने से यह स्पष्ट होता है कि इस क्षेत्र में प्रस्ताद का प्रदान आपनेंत समृद्ध है ।
प्रसाद काव्य के कैलिकात्मिक अध्ययन में हेतु प्रसाद की भाषावाणी में मात्र कैलिकात्मिक आयारों को अवस्थिति की बोध करना नहीं है बल्कि शोध का प्रतियोग तो यह देखना रहा है कि प्रसाद ने इस दृष्टिकोण से कितनी तपास पाई है। अपने अध्ययन के प्रत्येक तक प्रतिष्ठान किया जा सकता है कि प्रसाद भावुकता और उद्देश्याली पितामह हैं। भाषा और धार्मिकता का समन्वय दोनों घराता पर स्थायी-अन्य सुन्दर को भाषा की आगंतुकी रहता है। पिता और दातन की भाषा स्पष्ट, तर्कसाम्प्ति और विश्वास होती है जबकि काव्य की भाषा बीतरी आभार-पुका, अनेकार्था और ध्वस्त होती है।

कवि प्रसाद इस प्रकार की भाषा का प्रयोग करने में सिद्धांत है। प्रस्तुत अध्ययन यह स्पष्ट करता है कि प्रसाद बहुत ही कौशलपूर्वक संबद्ध का प्रयोग करते हैं।
परिशिष्ट ५ ट

१. उपजोड़व सामग्री
२. सहायक सामग्री
३. लोकप्रिय सूचना
वरिष्ठता

उपचौथाया सामूहिक

६. जयकेश प्रसाद के काण्डः जो आलोचित हैं।

१. आँखः - तृतीय संस्करण - 1977

२. कानन कुमार - पंजाब संस्करण - सं. 2007

३. कामायकी : द्वितीय संस्करण - 1980 - छठा संस्करण

४. विगलाधार - तृतीय संस्करण - 2014 वि.

५. चरना - पंजाब संस्करण - सं. 2004

६. प्रेम-पर्यावरण - तृतीय संस्करण - 1970

७. महाराणा का महत्त्व - तृतीय संस्करण - सं. 2005

८. नट - तृतीय संस्करण - 2004 वि.

९. प्रसाद-संगीत - पंजाब संस्करण - सं. 2013 वि.

ञ. नाटक पुस्तिकामें आये प्रागैतिहासिक संस्करण हैं।

१०. अन्तर्दृष्टि - तेलंगाना संस्करण - सं. 2008 वि.

११. झगड़ा पूंछ - दूसरा संस्करण - सं. 2004 वि.

१२. कल्पनालय - तृतीय संस्करण - सं. 2011 वि.

१३. कामना - चौथा संस्करण - 2007 वि.

१४. वन्दना पुंछ - चौथा संस्करण - सं. 2005 वि.
15. जनमेजय का नागया - तृतीय संस्करण - सं. 2005
17. राजा की - तात्विक संस्करण - वि. 2007
18. विषाख - पंक्ति संस्करण, सं. 2004
19. रघुनाथ्युपन्त रामगामितलय - तृतीय संस्करण - 1978

ग. काव्य और कला तथा अन्य निदेषः उपस्थापण गुप्त

20.
21. जयपक्ष प्रसाद - श्री नन्ददीलारे वाजसेरी - तृतीय संस्करण - सं. 2007 वि.
22. प्रसाद का जोयन दर्शन, कथा - तम्यादक - महत्तम अधिकारी - 1955 और कृतिलब्ध
23. कथा "प्रसाद" की काव्य-साहित्या - श्री रामानाथ "हुसैन" पाठवाया संस्करण - 1950
24. प्रसाद का काव्य - होळ प्रेमसेनकर, प्रथम संस्करण - 1955
25. प्रसाद का तात्तविक - संसारक - कृष्णदेव प्रसाद गोड़ "केटव" - 1957
26. प्रसाद तात्तविक और समस्त - होळ रामरतन मेटनाग - 1958
27. प्रसाद काव्य प्रवितवा और संसार - होळ हरिहर प्रसाद गुप्ता, प्रथम संस्करण - 1982
28. जयपक्ष प्रसाद कंशु और कला - रामेश्वरलाल छंडलाल - 1968
29. प्रसाद की तात्तविक तथ्यता - समस्तात्म पाण्डेय
30. प्रसाद काव्य-कोश - सुयाकर पाण्डेय, प्रथम संस्करण-1957
31. प्रसाद: कथा - होळ रामप्रसाद रिख - प्रथम संस्करण - 1979
32. प्रसाद की कला - तम्यादक - श्री रुपालय
33. प्रसाद और उनका साहित्य - विनोद शंकर व्यास, तृतीय संस्करण-1950
34. महाकाव्य "प्रसाद" - डॉ विलेन्द्र स्नातक तथा डॉ रामेश्वर लाल
35. प्रसाद के काव्य का शास्त्रीय अध्ययन - दुर्गेन्दुनाथ सिंह
36. प्रसाद के नाटकों का शास्त्रीय अध्ययन - डॉ जगन्नाथ प्रसाद शार्मा - वधूर्थ
संस्करण - 1956
37. प्रसाद काव्य में बिष्म पोजना - रामकृष्ण अग्रवाल - 1973
38. प्रसाद साहित्य कोंस - हरदेव बाहेरी
39. प्रसाद का मुजताक-काव्य - डॉ दारिकारत्रसाद साहिना
40. प्रसाद की विद्वानाथा - डॉ रामचरण भट्टागर
41. प्रसाद की काव्य-प्रशस्तिक - रामेश्वर प्रसाद सिंह
42. प्रसाद के काव्य में अवश्य-लोकना - हरदेव गुप्ता - 1978
43. प्रसाद की काव्य-नजता और उनका चौक दर्शन - रमिला सिंह - 1984
44. प्रसाद : आलोकनात्मक संरचना - रामपुसाद गिल्ला
45. प्रसाद कीकाव्य-प्रशस्ति - किसल बीकार नागर - 1982
46. प्रसाद काव्य में क्षेत्रित - डॉ देवकी नन्दन शर्मा
47. आयु तथा अन्य क्रियात्मक - डॉ रितामोहन शर्मा - वधूर्थ संस्करण - 1966
48. कामायकों : एक पुनर्विवाह - नेत्रत्रोध - विश्वनाथ अध्याय - 1991
49. हिन्दी का महाकाव्य कामायको - विकसप्रसाद शार्मी - 1991
[पुष्पाचित्र]
50. हिन्दी का महाकाव्य कामायको - विकसप्रसाद शार्मी - 1991
[उत्तराचित्र]
51. कामायको का काव्य-शास्त्रीय विवेक - डॉ लीहला गुप्ता
52. कामायको को आलोकना प्रशस्ति - गिरिजा राय
53. कामायकों का कैली-प्रीमानिक अध्ययन - डॉ. सुरेन्द्र द्वारे

54. कामायकों की भाषा - रमेश वन्द्र गुप्ता

55. कामायकों - अनुक्रिक - डॉ. रामलाल सिंह

56. कामायकों की व्याख्यात्मक आलोचना - विश्वानाथाल "केव्हा"

कैलीविज्ञान से संबंधित हिंदी एवं कैली गुण्यः

57. आचार्य हरारी द्वारा द्वारे के हृदि वंच का - डॉ. लक्ष्मीकाल वेंकटारे

कैलीविज्ञानिक अध्ययन

58. निराला के काण्ड का कैलीविज्ञानिक अध्ययन - डॉ. वेदप्रभु शर्मा

59. दिनकर को काण्ड-क्षेत्र: कैलीविज्ञानिक - डॉ. सरला परमार

अध्ययन

60. सुक्तकोश के काण्ड का कैलीविज्ञानिक - हुशाराधिक वोष प्रकरण सम्बंधित र

अनुक्रिक

61. पन्ना के काण्ड का कैलीविज्ञानिक अध्ययन - कान्ता पन्ना

62. भारतीय कैलीविज्ञान - डॉ. सत्येश सौकरे

63. रोगी और कैली - आचार्य नन्दकुमार वाजपेयी

64. रोगी विज्ञान : सर्वनात्मक समाचार का नया आधार-विज्ञानिकातिक निश्चित

65. व्याख्यात्मक कैली विज्ञान : भोलानाथ विश्वारी - 1985

66. कैली - डॉ. रामचंद्र प्रकाश

67. कैली और कैली विज्ञान : तृतृं लक्ष्मेसुभार और रविन्द्रनाथ श्रीवास्तव

68. कैलीविज्ञान : डॉ. नगेन्द्र
89. शैलोविप्रान - डॉ. भोलानाथ तिवारी

70. शैलोविप्रान - डॉ. सुरेशवंद्र

71. शैलोविप्रान और आलोचना को नई शृंखला - योगेन्द्रनाथ श्रीवास्तव

72. शैलोविप्रान और भारतीय काव्यशास्त्र - डॉ. तरंगदेव वोधरे।

73. शैलोविप्रान का स्वयं - डॉ. विजय दिवेदी

74. शैलोविप्रान की हस्तिने प्रेरित को भाषा का मध्यम - दुरेश्वर विधालकार

75. शैलोविप्रान की क्षेत्रें - डॉ. कुंवरकुमार शर्मा

76. शैलोविप्रानिक आलोचना के प्रतिदर्श - डॉ. कुंवरकुमार शर्मा

77. हिंदीकालीन का शैलोविप्रान - डॉ. शेखरकन्त ठाकुर

78. शैलोविप्रान और नाटक - डॉ. उपासना सिंह - 1983

79. शैलोविप्रान - संपादक - डॉ. वन्दुमणि रायज. प्रथम संस्करण - 1988

डॉ। दिरोय सिंह

80. शैलोविप्रान का क्षेत्र में कालिग्राम - प्राणेय शस्मानुमान "शाही" प्रथम संस्करण - 1983

81. आधुनिक आलोचना का भौगोलिक शैलोविप्रान - कुपरसिंह सिंह

82. पारवात्य और भारतीय शैलोविप्रान - राय गुप्ता - 1986

83. शैलोविप्रान और पारवात्य एवं भारतीय - डॉ. राय गुप्ता - 1933

ताहतिसंकेत

84. Linguistics & Style - Nils Enkvist.

85. Appreciations with an Essay on style - Walter Peter.

86. Elements of Style - Strunk White.
